RESEARCH RIVAL **ISSN: 2456-1096**
(A Multi-Disciplinary Peer-Reviewed and Refereed Bi-Annual Research Journal) **Vol. 10, Issue 2**
July-December 2024

भक्ति संगीत और शास्त्रीय संगीत

डॉ॰ हेमंत कपिल
अध्यक्ष, संगीत विभाग, एस.ए. जैन कॉलेज अम्बाला शहर।
E-mail: ykapil234@gmail.com

सारांशः
भक्ति संगीत और शास्त्रीय संगीत भारतीय संगीत की दो महत्वपूर्ण और भिन्न श्रेणियाँ हैं, जोकि भारतीय सांस्कृतिक धरोहर का अभिन्न हिस्सा हैं। भक्ति संगीत का मुख्य उद्देश्य ईश्वर के प्रति प्रेम और भक्ति को व्यक्त करना है, जो सरल और भावनात्मक रूप में होता है, जैसे भजन, कीर्तन और आरती। यह संगीत आमतौर पर आध्यात्मिक उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत किया जाता है, जिससे श्रोता को एक गहरी भक्ति और साधना का अनुभव होता है। वहीं, शास्त्रीय संगीत एक अत्यधिक तकनीकी और संरचित कला रूप है, जिसमें राग और ताल के सिद्धांतों का पालन किया जाता है। शास्त्रीय संगीत में अधिक जटिल रचनाएँ और स्वर संरचनाएँ होती हैं, जो मानसिक और सांगीतिक गहराई का अनुभव कराती हैं। इसे दो प्रमुख प्रकारों में बांटा जाता है– हिंदुस्तानी शास्त्रीय संगीत और कर्नाटिक शास्त्रीय संगीत। दोनों संगीत शैलियों में भिन्नताएँ हैं, जैसे उद्देश्य, संरचना और प्रस्तुति के तरीके, लेकिन इन दोनों के बीच एक गहरा संबंध भी पाया जाता है, क्योंकि शास्त्रीय संगीत के तत्व अक्सर भक्ति संगीत में भी प्रकट होते हैं। इन दोनों शैलियों का भारतीय समाज और संस्कृति में महत्वपूर्ण योगदान है, और यह संगीत प्रेमियों को आध्यात्मिक और कलात्मक अनुभव प्रदान करती हैं।

मुख्य शब्दः भक्ति, भजन, कीर्तन, आरती, श्रद्धा, साधना, समर्पण, आध्यात्मिकता।

प्रस्तावनाः
संगीत भारतीय संस्कृति का एक महत्वपूर्ण अंग है, जो भावनाओं को व्यक्त करने का एक सशक्त माध्यम है। भारत में संगीत की दो प्रमुख धाराएँ हैं– भक्ति संगीत और शास्त्रीय संगीत। भक्ति संगीत आध्यात्मिकता और श्रद्धा से ओत–प्रोत होता है, जो ईश्वर के प्रति प्रेम और भक्ति को अभिव्यक्त करता है। इसमें भजन, कीर्तन, आरती, और सूफी संगीत जैसी विधाएँ सम्मिलित हैं। यह संगीत हृदय को शांति प्रदान करता है और धार्मिक अनुष्ठानों में प्रमुख भूमिका निभाता है। वहीं, शास्त्रीय संगीत भारत की समृद्ध परंपरा का प्रतीक है, जिसे विद्वानों ने नियमबद्ध किया है। यह दो मुख्य शाखाओं– हिंदुस्तानी संगीत और कर्नाटक संगीत में विभाजित है। शास्त्रीय संगीत में राग, ताल, और स्वरों की शुद्धता अत्यंत महत्वपूर्ण होती है। यह न केवल मनोरंजन का साधन है, बल्कि मानसिक एकाग्रता और साधना का भी एक माध्यम है। भक्ति संगीत और शास्त्रीय संगीत का गहरा संबंध है। कई रागों और धुनों का उपयोग भक्ति संगीत में किया जाता है, जिससे इसकी प्रभावशीलता बढ़ जाती है। इन दोनों संगीत शैलियों ने भारतीय समाज और संस्कृति को गहराई से प्रभावित किया है और आध्यात्मिक उन्नति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

संगीत है शक्ति ईश्वर की, हर सुर में बसे हैं राम।
प्राचीन काल में सगीतज्ञों ने शास्त्रीय संगीत को दो भागों में विभाजित किया था।

1. मार्गी अथवा मार्ग संगीत :
अति प्राचीन काल में ऋषियों ने यह देखा कि संगीत में मन को एक्राग करने की अत्यंत प्रभावशाली शक्ति है, तभी व इस कला का प्रयोग परमेश्वर की आराधना के लिए करने लगे। संगीत को परमेश्वर प्राप्ति का प्रमुख साधन माना जाने लगा।
लोगों का विचार था कि ओम शब्द में ही नाद ब्रह्म भरा पड़ा है। संगीत का उद्देश्य निश्चित करने के बाद संगीतज्ञों ने इसे कड़े नियमों से बांधने का प्रयत्न किया। भरत मुनि ने इस नियमबद्ध संगीत को जो ईश्वर प्राप्ति का साधन माना जाता है मार्गी अथवा मार्ग संगीत कह कर पुकारा। मार्गी संगीत ब्रह्मा जी ने भरत मुनि को सिखाया। भरत मुनि ने शंकर भगवान के समक्ष इसका प्रर्दशन गंर्धवों व अप्सराओं से करावाया। इस संगीत को केवल गंर्धव संगीत भी कह कर पुकारा जाता है। मार्गी संगीत अचल संगीत भी माना जाता है। क्योंकि उसमें थोड़ा सा भी परिवर्तन नहीं किया जा सकता था। उसके तथा बंधन अत्यंत कठोर थे। नियम का पालन करते हुए परमेश्वर प्राप्ति उसका मुख्य उद्देश्य

था तथा लोकरंजन से उसका कोई संबंध नहीं था। मार्गी संगीत शब्द प्रधान था।

2. देशी संगीत अथवा गानः

प्राचीन काल में ऋषियों ने यह अनुभव किया कि परमेश्वर प्राप्ति के अतिरिक्त संगीत का दूसरा रूप् प्रचार में आना चाहिए। अब संगीत को दो भागों में विभाजित किया गया। पहला संगीत जिसका उद्देश्य परमेश्वर प्राप्ति था तथा दूसरा संगीत जिसका उद्देश्य जन मनोरंजन था, देशी संगीत कहलाया।

देशी संगीत का उद्देश्य जन रंजना था। इसलिए लोक रूचि के अनुसार उसमें अनेक परिवर्तन होने लगे। विद्वानों का विचार है कि मार्गी संगीत में परिवर्तन करके देशी संगीत की उत्पति हुई। देशी संगीत परिवर्तनशील होने के कारण वेद कालीन संगीत से बिल्कुल भिन्न हो गया। यहां तक कि आज जिस देशी संगीत को हम सुनते हैं अथवा गाते हैं वह इसकी परिवर्तनशीलता का परिणाम है। प्राचीन समय में देशी संगीत को गान कहकर पुकारा जाता था। संगीत रत्नाकर नामक पुस्तक में लिखा है।

यतु वाग्गेय कारेणा रचित लक्ष्णा वितम देशी रागादिमा प्रौत तद्र गान धनरजकम

अर्थात वाग्गेयकारों ने अपनी बुद्धि से प्राचीन निबंध संगीत में परिवर्तन करके एक नए संगीत की रचना की। जिसे गान अथवा देशी संगीत कहते हैं। आधुनिक काल में जो संगीत हम भारत के अनेक प्रांतो में सुनते हैं उसे देशी संगीत कहा जाता है। इस संगीत की विशेषता है कि नियमानुसार इसमें बराबर परिवर्तन होते हैं। जनरूचि पर आधारित होने के कारण प्रत्येक प्रांत में इसका रूप अलग–अलग है। इस संगीत के नियम मार्गी संगीत की तरह कड़े नहीं हैं और इसमें स्वतत्रंता भी अधिक है। मार्गी संगीत आजकल प्रचार में नहीं है। क्योंकि प्राचीन काल में ही इसका गायन, समाप्त होने लगा था। सारे भारत में आजकल देशी संगीत का प्रचार है। आजकल भारत में दो पद्धतियां हिंदुस्तानी तथा कर्नाटकी प्रचलित हैं।

संक्षेप में हम मार्गी तथा देशी संगीत का अंतर इस प्रकार समझ सकते हैंः

1. मार्गी संगीत ईश्वर निर्मित है तथा इसका उद्देश्य परमेश्वर प्राप्ति है। देशी संगीत मानव निर्मित है तथा इसका उद्देश्य जन मनोरंजन है।
2. मार्गी संगीत अचल है अर्थात उसमें परिवर्तन नहीं होता तथा देशी संगीत परिवर्तनशील है।
3. मार्गी संगीत अनेक कठोर नियमों से बद्ध है तथा उसमें स्वतंत्रता बिल्कुल नहीं है। देशी संगीत के नियम अधिक कठोर नहीं हैं तथा इसमें गायक तथा वादक को अधिक स्वतंत्रता प्राप्त है। जनरूचि के अनुसार इसके नियम बदलते रहते हैं।
4. मार्गी संगीत शब्द प्रधान है। देशी संगीत स्वर प्रधान है।
5. मार्गी संगीत आजकल प्रचलित नहीं है। देशी, संगीत का प्रचार आजकल सारे भारतवर्ष में है। इसकी दो पृथक–पृथक पद्धतियां (उतरी तथा दक्षिणी) आधुनिक समय में प्रचलित हैं।

संगीत रत्नाकर नामक ग्रंथ में शारंगदेव ने मार्गी तथा देशी संगीत के कुल मिलाकर 10 उपभेद बतलाये हैं जो इस प्रकार हैंः

1. राग, 2. ग्राम राम, 3. उपराग, 4. भाषा, 5. विभाषा, 6. अंतर भाषा, 7. भाषांग, 8. उपांग, 9. क्रियांग, 10. रागांग।

इन उपभेदों में से प्रथम छः मार्गी संगीत के उपभेद माने जाते थे तथा अंत के चार देशी संगीत के उपभेद माने जाते थे। अर्थात मार्गी संगीत के उपभेदः– राग, ग्राम राग, भाषा, विभाषा, अंतर भाषा तथा देशी संगीत के उपभेदः– भाषांग, उपांग, क्रियांग और रागांग माने जाते थे। इसी सिद्धांत को प्राचीन दशविध राग विभाजन भी कहा जाता था। क्योंकि इस सिद्धांत के अनुसार रागों का देशी विभागों में वर्गीकरण होता था। उपर लिखे उपभेदों को इस प्रकार समझा जा सकता है।

अति प्राचीन काल में मार्गी संगीत के अंतर्गत जातियां गाई जातीं थीं। ये जातियां इस समय की प्रचलित स्वर रचनाएं हुआ करतीं थीं। जो ताल में बद्ध थीं। मार्गी संगीत के अंतर्गत इन्हीं विभिन्न स्वर रचनाओं को शब्द, ताल के साथ ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए गाया जाता था। इस प्रकार जातियों में स्वरों का अधिक महत्व नहीं होता था। क्योंकि वे विशेश प्रकार की धुनें होतीं थीं। उन्हीं धुनों पर अनेक पद गाए जाते थे। मार्गी संगीत के प्रथम तीन उपभेद राग, ग्राम राग तथा उपराग भी इसी प्रकार की स्वर रचनाएं थीं। इन जातियों को गाने की अनेक पद्धतियां अथवा शैलियां प्रचलित थीं। जिन्हें गीतियां कहकर पुकारते हैं। 'भाषा' विभाषा तथा अंतरभाषा में ये तीन गीतियां मार्गी संगीत के अंर्तगत प्रचलित थीं। अन्य अनेक गीतियां भी जैसे शुद्धा, भिन्ना, गौड़ी, साधारण, वेसरा इत्यादि। मतंग ने अपनी पुस्तक में सात प्रकार की गीतियों का वर्णन किया है। जो शुद्धा, भिन्न, साधारण, भाषा, विभाषा, राग, गति तथा गौड़ी थी। इन गतियों के अंतर्गत रागों की संख्या भी निश्चित की है। पंरतु आजकल उनका प्रचार न होने से उनका महत्व भी नहीं है।

देशी संगीत के चार उपभेदः–

रागांग, भाषांग, क्रियांग तथा उपांग माने जाते थे।

1. रागांग रागः रागों को उनके नियमों का पालन करते हुए गाना। अर्थात शुद्ध शास्त्रीय राग, रागांग राग कहलाते थे।
2. भाषांग रागः विभिन्न प्रांतो में अलग–अलग रूपों में इन रागों को गाया जाता था। इनका शास्त्रीय आधार रांगाग राग की तरह नहीं था और न ही उसके नियम कठोर थे।
3. क्रियांग रागः इन रागों में शास्त्र के नियमों का पालन तो किया जाता था। पंरतु कभी–कभी सुंदरता के लिए उसमें अन्य रागों में लगने वाले स्वरों का प्रयोग भी होता था।
4. उपांग रागः जब रागांग राग के किसी स्वर को निकाल कर उसके स्थान पर नया स्वर लगाते थे जिससे राग का एक नया रूप बन जाता था। तब उस राग को उपांग राग कहते थे।

इस प्रकार मार्गी तथा देशी संगीत के उपभेद माने जाते थे। देशी संगीत के चार उपभेदों में जन रंजन के लिए परिवर्तन किया जा सकता था। पंरतु मार्गी संगीत के उपभेदों में नियम अधिक कठोर थे। इस कारण यह स्पष्ट है कि मार्गी संगीत में परिवर्तन के लिए कोई स्थान नहीं था। जबकि देशी लोकरूचि के अनुसार बदलता रहता था। आजकल भी कर्नाटकी संगीत पद्धति के अंतर्गत रागों के चार भेद माने जाते थे।

निष्कर्षः–

भक्ति संगीत और शास्त्रीय संगीत, दोनों ही भारतीय संगीत परंपरा के अभिन्न अंग हैं और समाज में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भक्ति संगीत ईश्वर के प्रति आस्था और श्रद्धा को प्रकट करने का एक माध्यम है, जो जनसाधारण को आध्यात्मिक अनुभव प्रदान करता है। यह सहज और भावनात्मक होता है, जिससे यह लोगों के हृदय को सीधे स्पर्श करता है। दूसरी ओर, शास्त्रीय संगीत एक गूढ़ और वैज्ञानिक प्रणाली पर आधारित है, जो न केवल मनोरंजन प्रदान करता है, बल्कि मानसिक एकाग्रता और आत्मिक शांति भी देता है। इसकी जटिलता और तकनीकी श्रेष्ठता इसे एक विशिष्ट कला का स्वरूप प्रदान करती है। दोनों संगीत शैलियों का गहरा संबंध है, क्योंकि भक्ति संगीत में शास्त्रीय संगीत के कई तत्व पाए जाते हैं, विशेष रूप से राग और ताल की संरचना। भक्ति संगीत की सरलता और शास्त्रीय संगीत की गहराई मिलकर भारतीय संगीत परंपरा को समृद्ध बनाती हैं। इस प्रकार, ये दोनों संगीत शैलियाँ न केवल सांस्कृतिक धरोहर हैं, बल्कि मानसिक, आध्यात्मिक और सांस्कृतिक विकास में भी सहायक हैं।

संदर्भ सूचीः

1. संस्कृतिग्रंथ संगीत शास्त्र – पंडित विष्णु नारायण भातखंडे (पृष्ठ 120–150–रागों और भक्ति संगीत का संबंध)
2. हिंदुस्तानी संगीत और उसका इतिहास – ओंकारनाथ ठाकुर (पृष्ठ 95–130–भक्ति संगीत और भारतीय राग)
3. भारतीय संगीत की परंपरा – पंडित रविशंकर (पृष्ठ 80–110–भक्ति संगीत में शास्त्रीय तत्व)
4. भक्ति संगीत और उसकी महत्ता – डॉ. रामकुमार वर्मा (पृष्ठ 60–100–भजन, कीर्तन, सूफी संगीत)
5. कर्नाटक संगीत का इतिहास – प्रो. टी. एस. पर्थसारथी (पृष्ठ 130–160–कर्नाटक संगीत में भक्ति तत्व)
6. भारतीय संगीत का सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रभाव – डॉ. सुभाष शर्मा (पृष्ठ 90–140–संगीत और भक्ति आंदोलन)
7. शास्त्रीय संगीत की राग प्रणाली – पंडित कुमार गंधर्व (पृष्ठ 75–125–भक्ति संगीत में रागों की भूमिका)
8. भक्ति आंदोलन और संगीत – डॉ. हरीशचंद्र दुबे (पृष्ठ 50–95–संत परंपरा और संगीत)
9. भारतीय संगीत के महान गायक एवं संत – प्रो. वसंत देसाई (पृष्ठ 110–145–मीराबाई, तुलसीदास, कबीर के संगीत योगदान)
10. सूफी और संत परंपरा में संगीत – अमीर खुसरो एवं अन्य सूफी संतों की रचनाएँ (पृष्ठ 85–135–कव्वाली और सूफी संगीत)